P: ISSN NO.: 2321-290X RNI : UPBIL/2013/55327 VOL-6* ISSUE-2* (Part-1) October- 2018
E: ISSN NO.: 2349-980X **Shrinkhla Ek Shodhparak Vaicharik Patrika**

स्वामी दयानन्द सरस्वती के शिक्षा दर्शन, सामाजिक तथा राजनीतिक विचारों का अध्ययन

वर्षा मेहन्दीरत्ता
शोधार्थी,
शिक्षा विभाग,
राजस्थान विश्वविद्यालय,
जयपुर, राजस्थान

सारांश

स्वामी दयानन्द सरस्वती एक महान शिक्षाविद्, समाज सुधारक और सांस्कृतिक राष्ट्रविद् थे। वह एक प्रकाश का देवता, एक योद्धा, भगवान के संसार में और संस्थान के एक मूर्तिकार। दयानन्द सरस्वती का सबसे बड़ा योगदान आर्यसमाज की नींव रखना जिसने शिक्षा व धर्म के क्षेत्र में क्रान्ति लाई। स्वामी दयानन्द सरस्वती सुधारकों में सबसे महत्वपूर्ण सुधारक थे और आध्यात्मिक ताकते हाल ही के दिनों में जाना जाता है। दयानन्द की दर्शनशास्त्र उनके तीन प्रसिद्ध योगदानों के लिए जाना जाता है – 'सत्यार्थ प्रकाश', 'वेद भाष्य भूमिका' और 'वेद भाष्य'।

आर्य पत्रिका का संपादन भी उनके द्वारा किया गया जो कि उनके विचारों को प्रदर्शित करती है। स्वामी दयानन्द महान आर्यसमाज के संस्थापक आधुनिक भारत के राजनीतिक विचारों के इतिहास का एक अद्वितीय इतिहास रखते है। जब भारत के शिक्षित युवा पुरुष यूरोपीय सभ्यता के सतही पहलुओं की नकल कर रहे थे और भारतीय लोगों की प्रतिभा और संस्कृति के लिये किसी भी सिर का भुगतान किये बिना इंग्लैण्ड के राजनीतिक संस्थान को प्रत्यारोपित करने के लिए आन्दोलन कर रहे थे।

दयानन्द भारत आर्य संस्कृति के सबसे बड़े प्रेषित थे और सभ्यता भारत में राजनीति में सबसे उन्नत विचारों का सबसे बड़ा प्रदर्शन साबित हुआ। वे मूर्तिपूजा के विरोध में थे, जातिवाद के कर्मकाण्डों के घातकता, छोटे बच्चों की हत्या आदि के विरोध में थे।

वे स्त्रियों की आजादी के पक्ष में थे तथा वांछित वर्ग की महिलाओं के उत्थान के पक्ष में थे। वेदों तथा हिन्दूओं को ध्यान में रखते हुए उन्होंने इस्लाम तथा क्रिश्चनिटी का विरोध किया तथा शुद्धि आन्दोलन का समर्थन किया। सम्प्रदायों को हिन्दू व्यवस्था में पुर्नजीवित करने के लिए।

दयानन्द ने राजनीतिक विचार भी व्यक्त किये। राज्य की थ्योरी का वर्णन, सरकार का गठन, तीन कैमरक कानून, सरकार के कार्य तथा कानून का शासन आदि।

मुख्य शब्द : स्वामी दयानन्द सरस्वती, राजनीतिक विचार, आर्य संस्कृति।

प्रस्तावना

महर्षि दयानन्द सरस्वती धर्म मर्मज्ञ, आर्य समाज के संस्थापक, समाज सुधारक और राष्ट्र भाषा हिन्दी के प्रचारक के रूप में अधिक प्रसिद्ध है। परन्तु इन सब कार्य के लिए इन्होंने शिक्षा के क्षेत्र में क्रांतिकारी परिवर्तन किये थे इसलिए ये शिक्षाशास्त्री के रूप में भी प्रसिद्ध है। दयानन्द जी प्राचीन भारतीय शिक्षा पद्धति के सबसे बड़े समर्थक थे। इन्होंने अंग्रेजों के माध्यम से ही जाने वाली अंग्रेजी शिक्षा का विरोध किया और प्राचीन परम्परानुसार वेद, उपनिषद् और स्मृतियों की शिक्षा की आवश्यकता पर बल दिया। स्वामी दयानन्द सरस्वती ने कोई नया सम्प्रदाय नहीं चलाया अपितु उनका उद्देश्य तो वैदिक धर्म के सूखे क्रम को पुनः हरा भरा करना था।

ऐसी शिक्षा का भण्डार स्वामी दयानन्द के शैक्षिक विचारों में देखा जा सकता है। शिक्षा शास्त्र के अध्येता आज भी अपने विषयों का अध्ययन स्वामी दयानन्द से प्रारम्भ करने में गौरव की अनुभूति करते है।

स्वामी दयानन्द जी ने क्रांति की अपेक्षा सुधार को अपनाया। उन्होंने वेदों का सही भाष्य करने का बीड़ा उठाया और वैदिक धर्म का सच्चा रूप सामने रखने का प्रयास किया। वैदिक धर्म के प्रचार के इन्होंने 1875 ई. में आर्य समाज की स्थापना की।

स्वामी दयानन्द सरस्वती की समाज में स्त्रियों का स्थान महत्वपूर्ण मानते थे। वे पुरुष के साथ नारी की समानता का पूर्ण समर्थन करते है। उनके

अनुसार भारतीय समाज की हीनावस्था का एक महत्वपूर्ण कारण यह भी है कि इस समाज में नारी का सम्मान पूर्ण स्थान नहीं रह गया है। वे नारी और पुरुष के अधिकारों की पूर्ण समानता, स्वीकार करते है पर दोनों के कार्यक्षेत्रों का विभाजन भी मानते है।

स्वामी दयानन्द ने सत्य धर्म एक ही माना है और उनकी दृष्टि में धर्म वही हो सकता है जो श्रेष्ठ मानव मूल्यों की रचनात्मक प्रक्रिया को गतिशील रखने में समय हो सके। बाद के समन्वयवादियों और अन्तर्राष्ट्रीयतावादियों ने दयानन्द को कट्टरपंथी और खण्डन–मण्डन करने वाले सुधारक के रूप में प्रस्तुत करने की चेष्टा की है। परन्तु वस्तु स्थिति यह है कि उनके जैसा उदार मानवतावादी नेता दूसरा नहीं रहा है। उन्होंने धर्म की सदा व्यापक परिकल्पना सामने रखी है। वे धार्मिक सम्प्रदायों को स्वीकार कर शुद्ध मानव मूल्यों पर प्रतिष्ठित धर्म को स्वीकार कर शुद्ध मानव मूल्यों पर प्रतिष्ठित धर्म को स्वीकार करने के पक्ष में रहे है। इस दृष्टि से वे भारतीय सन्तों के समान उदार व व्यापक दृष्टिकोण के माने जाते है। परन्तु संतों का दृष्टिकोण मुख्यतः आध्यात्मिक जीवन तक सीमित था। जबकि दयानन्द के सामने भारतीय जन समाज के सर्वांगीण विकास का व्यापक लक्ष्य था। उनका धार्मिक उद्देश्य बहुत कल्याणकारी और व्यापक था। वस्तुतः उन्होंने समाज के सामने दो महत्वपूर्ण बात रखी थी। प्रथम यह कि मूल सत्य तथा मानवीय मूल्यों की सृजनशीलता से प्रेरित एक ही धर्म है। द्वितीय कि ये धर्म तत्त्व संसार के सभी श्रेष्ठ धर्मों के मूल में निहित है। यह धर्मों की साम्प्रदायिकता है कि जो उन्हें अलग रूपों में प्रकट करती है। इसके साथ अपने निहित स्वार्थ जुड़ जाते है और धर्म में अंधविश्वासों तथा जड़ताओं का आश्रय लेकर असत्य का प्रवेश होता है।

उन्होंने इसलिए बार–बार प्रस्ताव किया है कि सभी धर्म के लोग शुद्ध मानवीय धर्म का पालन कर सकते है। क्योंकि किसी धर्म का इससे विरोध नहीं हो सकता है और कोई भी धर्मावलम्बी आर्य–धर्म अर्थात् श्रेष्ठ मानव धर्म का पालन कर सकता है। धर्म जीवन का पर्याय कभी नहीं बना, यह उनके द्वारा 'आर्य समाज' की स्थापना से भी सिद्ध होता है। आर्य–समाज कभी किसी धर्म का रूप नहीं ले सकता। यह उनकी इच्छा और विश्वास का ही परिणाम था। स्वामी दयानन्द सरस्वती ने मानव मूल्यों पर प्रतिष्ठित धर्म की जो व्यापक तथा सृजनशील व्याख्या की थी, वह आज के भारत में अनेक धर्मों के स्वस्थ, सहज और रचनात्मक समन्वय की उचित भूमिका है।

दयानन्द सरस्वती का जीवन परिचय

महर्षि दयानन्द का जन्म सन् 1824 में वर्तमान गुजरात प्रदेश के तत्कालीन गौरवी राज्य में, एक उच्च और सम्पन्न ब्राह्मण परिवार में हुआ था। इनका वास्तविक नाम मूलशंकर था। इनके पिता श्री कर्पण लाल त्रिवेदी शिव के बड़े भक्त थे और राज्य के तहसीलदार पद पर रहते हुए भी इनका अधिकतर समय शिवजी की पूजा और उपासना में ही व्यतीत होता था। मूल जी के पिता श्री कर्पण लाल स्वभाव के कुछ कठोर थे पर इनकी माता बड़ी दयालु प्रवृत्ति की थी। ऐसे परिवार में श्री मूल जी का लालन–पालन हुआ।

मूल जी की शिक्षा का आरम्भ उनके घर से ही हुआ। जब ये पाँच वर्ष के थे तभी इनके पिता ने इन्हें संस्कृत, व्याकरण, संस्कृत के श्लोक और वेद मंत्र कण्ठस्थ कराना शुरू कर दिया था। आठ वर्ष की आयु में इनका यज्ञोपवीत संस्कार हुआ और इनके पिता ने इन्हें संध्या, उपासना और उपवास आदि के नियमों का कठोरता से पालन करने का आदेश दिया। नियम और संयम से पूर्ण जीवन व्यतीत करते हुए कुशाग्र बुद्धि मूल जी ने चौदह वर्ष की आयु तक वेदों का अध्ययन कर डाला और उनके कुछ अंशों को कण्ठस्थ भी कर लिया। इनका अध्ययन क्रम जारी रहा और कुछ ही समय में इन्होंने अपने घर तथा गांव के विद्वान् पण्डितों के सहयोग से निघण्टु और निरूक्त आदि अनेक संस्कृत ग्रन्थों का अध्ययन भी कर डाला।

मूलजी को शिव उपासना की विधि भी सिखाई गई। दसवें वर्ष में अर्थात् सन् 1834 ई. में मूलजी मूर्तिपूजा करने लगे। 14 वर्ष की आयु में उन्होंने चजुर्वेद संहिता कण्ठस्थ कर ली और कुछ अन्य वेदों का पाठ भी पढ़ लिया।

20 वर्ष की आयु होने पर मूलजी ने अपने पिता से कहा कि वह काशी जाकर अध्ययन करना चाहते है किन्तु पिता ने आज्ञा नहीं दी क्योंकि वे उनका विवाह करना चाहते थे। विवाह के डर से मूलजी घर से भाग गए और अनेक स्थानों का भ्रमण करते हुए पूर्णानन्द सरस्वती नामक स्वामी से संयास की दीक्षा ली। इसके बाद व्यासाश्रम में योगानन्द जी से योग विद्या पढ़ी।

इसके बाद कृष्ण शास्त्री जी से व्याकरण तथा आश्रू पर्वत पर राजयोगियों से योगाभ्यास सीखा। अन्त में 1890 ई. को मथुरा आये और स्वामी विरजानन्द से भेंट की। कलकत्ते से बंगाल और बिहार के अन्य नगरों में गये और वहां से पुनः देश के अन्य भागों में भ्रमण करके धर्म चर्चा करते रहे। बंगाल के भ्रमण करके धर्म चर्चा करते रहे। बंगाल के भ्रमण के बाद हिन्दी में प्रचार करने से वे जनता के अधिक निकट आने लगे। सन् 1875 ई. में स्वामी जी ने बम्बई में आर्य समाज की स्थापना की।

30 अक्टूबर, सन् 1883 ई. को दीपावली के थोड़े समय की रूग्णता के बाद स्वामी दयानन्द जी का अजमेर में देहावसान हो गया। स्वामी दयानन्द की मृत्यु से देशवासियों को बड़ा आघात लगा। हमारी मन्तव्यों और उनकी शिक्षा से चाहे कितनी भी विुखता हो परन्तु फिर भी हम यह कहे बिना नहीं रह सकते कि स्वामी दयानन्द संसार के अतीव, उच्च महापुरुषों में से थे और हिन्दुस्तानियों को उचित है कि उनकी मृत्यु पर अश्रुपात करें।

स्वामी दयानन्द सरस्वती का शिक्षा दर्शन

इस प्रकार स्वामी दयानन्द ने बहुमुखी शिक्षा का उपदेश दिया है। उन्होंने सामान्य शिक्षा के साथ–साथ धार्मिक और व्यावसायिक शिक्षा आवश्यक मानी है। धार्मिक शिक्षा इसलिए आवश्यक है क्योंकि उसके बिना चरित्र का विकास नहीं होता। धार्मिक शिक्षा के लिये दयानन्द ने देश में सब कहीं, विशेषतया उत्तरी भारत में, आर्यसमाजों और

गुरुकुलों की स्थापना की। आर्यसमाज एक व्यवस्थापक संस्था है। यह वैदिक विद्यालयों की देखरेख करता है। 1886 में लाहौर में दयानन्द एंग्लो वैदिक कॉलेज तथा 1902 में कांगड़ी में गुरुकुल की स्थापना हुई। यह गुरुकुल आज स्वतंत्र विश्वविद्यालय है। इसके अतिरिक्त ज्वालापुर और वृन्दावन में गुरुकुलों की स्थापना की गई। दयानन्द की शिक्षा के अनुसार कन्याओं के लिये पृथक गुरुकुल है, जिनमें देहरादून, बड़ौदा तथा सासनी के गुरुकुल महत्वपूर्ण है। आजकल लगभग प्रत्येक जिले में और अधिकतर बड़े–बड़े नगरों में दयानन्द एंग्लो वैदिक कॉलेज और आर्य–पुत्र पाठशाला तथा आर्य–पुत्री पाठशालायें दयानन्द के उपदेशों का प्रचार कर रही है। इस प्रकार दयानन्द ने केवल जन–शिक्षा के व्यापक प्रचार का समर्थन ही नहीं किया, बल्कि आर्यसमाज के रूप में एक ऐसे संगठन की स्थापना की जिसने उनके विचारों के आधार पर देश में शिक्षा फैलाने का भी प्रयास किया।

स्वामी दयानन्द का शिक्षा दर्शन प्राचीन वैदिक शिक्षा–दर्शन है, यद्यपि वैदिक शिक्षा दर्शन की व्याख्या उनकी अपनी है। जिस समय उन्होंने अपने उपदेश दिए, उस समय देश को ईसाई और मुस्लिम दर्शन और धर्म से हिन्दू दर्शन और धर्म की रक्षा करने के लिए जबर्दस्त प्रयास की आवश्यकता थी। दयानन्द ने हिन्दु समाज को टुकड़े होने से बचा लिया और स्त्रियों को समाज में फिर से उनको सम्मानित स्थान प्राप्त कराया। उन्होंने ईसाई और मुस्लिम संस्कृति के प्रभाव से हिन्दु संस्कृति की रक्षा की और प्राचीन भारतीय हिन्दू मूल्यों, विचारों और व्यवस्थाओं को बनाये रखने के लिए अधिक परिश्रम किया है। समकालीन भारतीय शिक्षा दर्शन में उनके विचारों का शाश्वत् महत्व है।

अध्ययन का उद्देश्य

1. स्वामी दयानन्द सरस्वती जी के जीवन दर्शन का अध्ययन करना।
2. स्वामी दयानन्द सरस्वती के शिक्षा दर्शन का अध्ययन करना।
3. स्वामी दयानन्द सरस्वती द्वारा प्रतिपादित सामाजिक, धार्मिक, तथा राजनीतिक विचारों का अध्ययन करना।
4. स्वामी दयानन्द सरस्वती के शैक्षिक विचारों का अध्ययन करना।

स्वामी दयानन्द सरस्वती के सामाजिक विचार

स्वामी दयानन्द सरस्वती के सामाजिक विचारों में प्रमुख यह है कि वे हिन्दू समाज को सामाजिक कुरीतियों, अंधविश्वासों एवं कुप्रथाओं से मुक्त कराना चाहते थे। वे यह मानते थे कि हिन्दू समाज कुरीतियों एवं सामाजिक बुराइयों, धार्मिक अंधविश्वासों में डूबा हुआ है। इसे उन बुराइयों से मुक्त करने की आवश्यकता है।

उन्होंने जाति प्रथा का घोर विरोध किया। सारा हिन्दू समाज इसी प्रथा के कारण छिन्न–भिन्न हो रहा है। वे न तो मंदिरों में प्रवेश पा सकते है और न वेदों का अध्ययन कर सकते है। समाज को जातिप्रथा एवं अस्पृश्यता से मुक्त करने के लिए समाज को उन्नत व सशक्त बनाने की आवश्यकता है। उन्होंने वर्णाश्रम व्यवस्था को कर्म पर आधारित माना है, न कि जन्म पर।

उन्होंने बाल–विवाह, दहेज प्रथा जैसी प्रथाओं का विरोध किया है। उन्होंने सर्वप्रथम बाल–विवाह के विरोध में विवाह के लिए लड़कों की आयु 25 वर्ष और लड़कियों की आयु 16 वर्ष निश्चित की। दहेज प्रथा को समाज का अभिशाप बताते हुए उसके उन्मूलन हेतु प्रयास किया।

विधवाओं के पुनर्विवाह हेतु उन्होंने सार्थक व सक्रिय प्रयास किये। मुसलमानों द्वारा बलपूर्वक धर्म परिवर्तन को शुद्धिकरण के माध्यम से पुनर्गठित किया। हिन्दू धर्म में वापसी के लिए धर्म शुद्ध आन्दोलन बनाया। स्वामीजी ने ऐसे सहस्त्र लोगों को ईसाई धर्म से हिन्दू धर्म में प्रविष्ट कराया। दयानन्द ने नारी शिक्षा तथा उनके अधिकारों का समर्थन किया। उन्होंने पर्दा प्रथा तथा नारी शिक्षा की उपेक्षा का घोर विरोध किया। आर्यसमाज के माध्यम से कन्या स्कूल खोलने तथा स्त्री शिक्षा के प्रचार का कार्य किया। बाल–विवाह, दहेज प्रथा आदि के विरूद्ध आन्दोलन चलाया।

स्वामी दयानन्द सरस्वती के राजनीतिक विचार

स्वामी दयानन्द संयासी एवं कर्मयोगी थे। वे भारतीय राष्ट्रवाद के प्रबल समर्थक थे। वे सन् 1857 के स्वतंत्रता संग्राम के सक्रिय कार्यकर्ता थे। वे ऐसा बौद्धिक जागकरण चाहते थे, जो आधुनिक युग के अनुरूप गुलाम भारतीयता को सब बंधनों से मुक्त कराये। उन्होंने स्वराज्य का उद्घोष करते हुए 'स्वशासन' एवं 'स्वराज्य' की मांग उठायी।

वे भारतीयता एवं भारतीय संस्कृति पर गर्व महसूस करते थे। इसी भारतीयता को वे गुलामी से मुक्त कराना चाहते थे, ताकि उस पर गर्व किया जा सके। उन्होंने स्वराज्य, लोकतंत्र की मांग की। राष्ट्रीयता को प्रोत्साहित करते हुए राष्ट्रभाषा हिन्दी का समर्थन किया। आर्थिक स्वतंत्रता हेतु स्वदेशी वस्तुओं के प्रयोग पर बल दिया।

निष्कर्ष

स्वामी दयानन्द सरस्वती ने धार्मिक, सामाजिक, राजनीतिक विचारों की अज्ञान निद्रा में सोये हुए भारत को जागृत किया। 10 अप्रैल 1875 को आर्य समाज की स्थापना कर राष्ट्रीय पुर्नजागरण का कार्य किया। मानवता के लिए किये गये उनके कार्य निःसन्देह महान् थे।

लोकमान्य तिलक ने उनके विषय में लिखा है – ''ऋषि दयानन्द जाज्वल्यमान नक्षत्र थे, जो भारतीय आकाश पर अलौकिक आभा में चमके और गहरी निद्रा में सोये हुए भारत को जागृत कर गये। वे स्वराज्य के प्रथम उद्घोषक एवं मानवता के उपासक थे।

संदर्भ ग्रंथ सूची

1. *दयानन्द, स्वामी; सत्यार्थ प्रकाश।*
2. *मल्होत्रा, शान्ता; स्वामी दयानन्द सरस्वती के राजनीतिक विचार, के.के. पब्लिकेशन, नई दिल्ली, 2001.*
3. *चौधरी, एस.के.; 'ग्रेट पॉलिटिकल विचारक स्वामी दयानन्द सरस्वती, सोनाली पब्लिकेशन, नई दिल्ली, 2008.*
4. *उपाध्याय, गंगा प्रसाद; फिलासफी ऑफ दयानन्द, इलाहाबाद, गंगा ज्ञान मंदिर, 1955.*
5. *प्रकाश विश्व; लाइफ एण्ड टीचिंग ऑफ स्वामी दयानन्द, इलाहाबाद, कला प्रेस, 1935.*
6. *शर्मा, डॉ. रामनाथ; भारतीय शिक्षा दर्शन, आगरा, विनोद पुस्तक मंदिर, 1971.*